अजीव अधिकार, गाथा ३५ और ३६। जानने की है परन्तु ये तीन गाथायें हैं,

संखेज्जासंखेज्जाणंतपदेसा हवंति मुत्तस्स।
धम्माधम्मस्स पुणो जीवस्स असंखदेसा हु।।३५।।

लोयायासे तावं इदरस्स अणंतयं हवे देसा।
कालस्स ण कायत्तं एयपदेसो हवे जम्हा।।३६।।

होते अनन्त, असंख्य, संख्य प्रदेश मूर्तिक द्रव्य के।
अरु हैं असंख्य प्रदेश आत्मा और धर्म अधर्म के॥३५॥

अनसंख्य लोकाकाश के हैं, अरु अनन्त अलोक के।
नहिं काल को कायत्व है, वह इक प्रदेशी द्रव्य है॥३६॥

---

१. आकाश के प्रदेश की भाँति, किसी भी द्रव्य का एक परमाणु द्वारा व्यपित होनेयोग्य जो अंश, उसे उस द्रव्य का प्रदेश कहा जाता है। द्रव्य से पुद्गल एक प्रदेशी होने पर भी, पर्याय से स्कन्धपने की अपेक्षा से, पुद्गल को दो प्रदेशों से लेकर अनन्त प्रदेश भी सम्भव होते हैं।

टीका :— **इसमें छह द्रव्यों...** है भगवान ने देखे हुए। उनके प्रदेश का लक्षण कहने में आया है। और उनके सम्भव-वे हो सकते हैं या नहीं, इसके प्रकार कहे गये हैं। दो प्रकार कहे। उनका लक्षण और सम्भव। उस ओर अर्थ है।

शुद्धपुद्गलपरमाणु द्वारा रुका हुआ आकाशस्थान ही प्रदेश है (अर्थात्, शुद्धपुद्गलरूप परमाणु, आकाश के जितने भाग को रोकें, उतना भाग, वह आकाश का प्रदेश है)। प्रदेश की व्याख्या की है। आकाश की अपेक्षा से। बाकी तो नीचे है। **आकाश के प्रदेश की भाँति, किसी भी द्रव्य का एक परमाणु द्वारा व्यपित होनेयोग्य जो अंश, उसे उस द्रव्य का प्रदेश कहा जाता है।** वह आकाश की अपेक्षा से कहा था, यह पृथक् दूसरी बार कहा। **द्रव्य से पुद्गल एक प्रदेशी होने पर भी, पर्याय से स्कन्धपने की अपेक्षा से, पुद्गल को दो प्रदेशों से लेकर अनन्त प्रदेश भी सम्भव होते हैं।**

पुद्गलद्रव्य को ऐसे प्रदेश, संख्यात, असंख्यात और अनन्त होते हैं। लोकाकाश को, धर्म को, अधर्म को तथा एक जीव को असंख्यात प्रदेश हैं। शेष जो अलोकाकाश, उसे अनन्त प्रदेश हैं। काल को एक प्रदेश है, उस कारण से उसे कायत्व नहीं है परन्तु द्रव्यत्व है ही। श्लोक।

श्लोक-५२

(अब, इन दो गाथा की टीका पूर्ण करते हुए, टीकाकार मुनिराज श्लोक कहते हैं:)

(उपेन्द्रवज्रा)

पदार्थरत्नाभरणं मुमुक्षोः कृतं मया कण्ठविभूषणार्थम्।
अनेन धीमान् व्यवहारमार्गं बुद्ध्वा पुनर्बोधति शुद्धमार्गम्।।५२।।

(वीरछन्द)

जीवादिक षट् द्रव्यरूप यह रत्नाभरण सुशोभित है।
मैंने इसे मुमुक्षु कण्ठ की शोभा हेतु बनाया है॥

बुद्धिमान जन इस आभूषण से व्यवहारमार्ग जानें।
इसे जानकर भव्य जीव, वे शुद्धमार्ग को भी जानें॥५२॥

***श्लोकार्थ :*—पदार्थोंरूपी (छह द्रव्योंरूपी) रत्नों का आभरण मैंने, मुमुक्षु के कण्ठ की शोभा के हेतु बनाया है; उसके द्वारा धीमान पुरुष, व्यवहारमार्ग को जानकर, शुद्धमार्ग को भी जानता है॥५२॥**

श्लोक-५२ पर प्रवचन

पदार्थरत्नाभरणं मुमुक्षोः कृतं मया कण्ठविभूषणार्थम्।
अनेन धीमान् व्यवहारमार्गं बुद्ध्वा पुनर्बोधति शुद्धमार्गम्॥५२॥

पदार्थोंरूपी (छह द्रव्योंरूपी) रत्नों का आभरण... मुनि कहते हैं। छह द्रव्य भगवान ने देखे, उनकी व्याख्या की। उन **रत्नों का आभरण मैंने, मुमुक्षु के कण्ठ की शोभा के हेतु बनाया है;...** व्यवहार है न। **उसके द्वारा धीमान पुरुष,...** बुद्धिमान पुरुष। **व्यवहारमार्ग को जानकर,...** छह द्रव्य, उनके प्रदेश, उनकी काय इत्यादि **शुद्धमार्ग को भी जानता है।** शुद्धमार्ग को भी जानते हैं, ऐसा। व्यवहारमार्ग, छह द्रव्य उनके प्रदेश सब हैं। जैसा है, वैसा पहले जाने; जानकर शुद्धमार्ग—आत्मा आनन्दस्वरूप के पवित्र मार्ग को भी जाने। जिसे जानकर यह जानना है, ऐसा कहते हैं।

शुद्धमार्ग को भी जानता है। ऐसा कहा न? वह व्यवहारमार्ग कहा सही न, इसलिए शुद्ध आत्मा को जानते हैं, ऐसा नहीं कहा। शुद्ध व्यवहारमार्ग को जाने और शुद्धमार्ग को भी जाने। क्या कहा? और फिर शुद्ध को जाने। शुद्धमार्ग को जाने, ऐसा कहा। ३७वीं (अजीव अधिकार की) अन्तिम गाथा।

गाथा-३७

पोग्गलदव्वं मुत्तं मुत्तिविरहिया हवंति सेसाणि।
चेदणभावो जीवो चेदणगुणवज्जिया सेसा।।३७।।

पुद्गलद्रव्यं मूर्तं मूर्तिविरहितानि भवन्ति शेषाणि।
चैतन्यभावो जीवः चैतन्यगुणवर्जितानि शेषाणि।।३७।।

अजीवद्रव्यव्याख्यानोपसंहारोऽयम्। तेषु मूलपदार्थेषु पुद्गलस्य मूर्तत्वं, इतरेषाममूर्तत्वम्। जीवस्य चेतनत्वं, इतरेषामचेतनत्वम्। स्वजातीयविजातीयबन्धापेक्षया जीवपुद्गलयोर-शुद्धत्वं, धर्मादीनां चतुर्णां विशेषगुणापेक्षया शुद्धत्वमेवेति।

है मूर्तपुद्गल, शेष पाँचों ही अमूर्तिक द्रव्य हैं।
है जीव चेतन, शेष पाँचों चेतनागुण शून्य हैं॥३७॥

गाथार्थ :—[पुद्गलद्रव्यं] पुद्गलद्रव्य, [मूर्तं] मूर्त है; [शेषाणि] शेष द्रव्य, [मूर्तिविरहितानि] मूर्तत्वरहित [भवन्ति] हैं। [जीवः] जीव, [चैतन्यभावः] चैतन्यभाववाला है; [शेषाणि] शेष द्रव्य, [चैतन्यगुणवर्जितानि] चैतन्यगुणरहित हैं।

टीका :—यह, अजीवद्रव्य सम्बन्धी कथन का उपसंहार है।

उन (पूर्वोक्त) मूलपदार्थों में पुद्गल, मूर्त है; शेष, अमूर्त हैं। जीव चेतन है; शेष, अचेतन हैं। स्वजातीय और विजातीय बन्धन की अपेक्षा से जीव तथा पुद्गल को (बन्धदशा में) अशुद्धपना होता है; धर्मादि चार पदार्थों को विशेषगुण की अपेक्षा से (सदा) शुद्धपना ही है।

गाथा-३७ पर प्रवचन

पोग्गलदव्वं मुत्तं मुत्तिविरहिया हवंति सेसाणि।
चेदणभावो जीवो चेदणगुणवज्जिया सेसा।।३७।।

है मूर्तपुद्गल, शेष पाँचों ही अमूर्तिक द्रव्य हैं।
है जीव चेतन, शेष पाँचों चेतनागुण शून्य हैं॥३७॥

टीका :—**यह, अजीवद्रव्य सम्बन्धी कथन का उपसंहार है। मूलपदार्थों में पुद्गल, मूर्त है; शेष, (पाँच) अमूर्त हैं। जीव चेतन है; शेष, अचेतन हैं। स्वजातीय और विजातीय बन्धन की अपेक्षा से....** परमाणु, परमाणु के साथ सम्बन्ध, वह सजातीय और परमाणु जीव के साथ बँधे, वह विजातीय। यह **जीव तथा पुद्गल को (बन्धदशा में) अशुद्धपना होता है; धर्मादि चार पदार्थों को विशेषगुण की अपेक्षा से (सदा) शुद्धपना ही है।** उनके तो गुण और पर्यायें सब शुद्ध ही हैं।

श्लोक-५३

(अब, इस अजीव-अधिकार की अन्तिम गाथा की टीका पूर्ण करते हुए, टीकाकार मुनिराज श्री पद्मप्रभमलधारिदेव श्लोक कहते हैं -)

(मालिनी)

इति ललित-पदाना-मावलिर्भाति नित्यं,
वदन-सरसि-जाते यस्य भव्योत्तमस्य।
सपदि समय-सारस्तस्य हृत्पुण्डरीके,
लसति निशितबुद्धेः किं पुनश्चित्रमेतत्।।५३।।

इति सुकविजनपयोजमित्रपञ्चेन्द्रियप्रसरवर्जितगात्रमात्रपरिग्रहश्रीपद्मप्रभमलधारिदेव-विरचितायां नियमसारव्याख्यायां तात्पर्यवृत्तौ अजीवाधिकारो द्वितीयः श्रुतस्कन्धः।

(वीरछन्द)

जिस भव्योत्तम के मुख में, इन पद की ललित पंक्ति शोभे।
क्या आश्चर्य है कि उसके उर में, समयसार सत्वर शोभे॥५३॥

***श्लोकार्थ :*—इस प्रकार ललितपदों की पंक्ति, जिस भव्योत्तम के मुखारविंद में सदा शोभती है, उस तीक्ष्ण बुद्धिवाले पुरुष के हृदयकमल में समयसार (शुद्ध आत्मा) शीघ्र प्रकाशित होता है और इसमें आश्चर्य क्या है!॥५३॥**

इस प्रकार, सुकविजनरूपी कमलों के लिये जो सूर्य समान हैं और पाँच इन्द्रियों के फैलाव रहित देहमात्र जिन्हें परिग्रह था ऐसे पद्मप्रभमलधारिदेव द्वारा रचित नियमसार की तात्पर्यवृत्ति नामक टीका में (अर्थात् श्रीमद्भगवत्कुन्दकुन्दाचार्यदेव प्रणीत श्री नियमसार परमागम की निर्ग्रन्थ मुनिराज श्री पद्मप्रभमलधारिदेवविरचित तात्पर्यवृत्ति नामक टीका में) अजीव अधिकार नाम का दूसरा श्रुतस्कन्ध समाप्त हुआ।

श्लोक-५३ पर प्रवचन

इति ललित-पदाना-मावलिर्भाति नित्यं,
वदन-सरसि-जाते यस्य भव्योत्तमस्य।
सपदि समय-सारस्तस्य हृत्पुण्डरीके,
लसति निशितबुद्धेः किं पुनश्चित्रमेतत्॥५३॥

***श्लोकार्थ :*—इस प्रकार ललितपदों की पंक्ति,...** छह द्रव्यों का स्वरूप बताया न। **जिस भव्योत्तम के मुखारविंद में सदा शोभती है,...** उत्तम भव्य के मुख में वह शोभती है। छह द्रव्य जगत में हैं, उनके गुण, पर्यायें हैं। व्यवहार सिद्ध करते हैं। यह बात बराबर कहते हैं, स्थापित करते हैं, जानते हैं - ऐसा कहेंगे। **उस तीक्ष्ण बुद्धिवाले पुरुष के हृदयकमल में समयसार (शुद्ध आत्मा) शीघ्र प्रकाशित होता है...** छह द्रव्य का ज्ञान एक समय की पर्याय में आता है, ऐसा जानकर तीक्ष्ण बुद्धिवन्त पुरुष, **हृदयकमल में समयसार (शुद्ध आत्मा) शीघ्र प्रकाशित होता है...** अन्तर्मुख होने पर चैतन्यद्रव्य, ज्ञायकभाव आनन्दरूप से प्रकाशित होता है, इसका नाम धर्म और आत्मा का ज्ञान कहा

जाता है। **इसमें आश्चर्य क्या है!** ऐसा व्यवहारमार्ग जिसने बराबर जाना, और वह पश्चात् वहाँ से निकलकर अन्तर्मुख में... वह वदनारविन्द में कहा था, मुख में शोभता है। छह द्रव्य हैं। यह तो अन्तरबुद्धि करके **तीक्ष्ण बुद्धिवाले पुरुष के हृदयकमल में शीघ्र समयसार...** आनन्द का कन्द प्रभु ज्ञायकभाव, जो वस्तुरूप से अनादि वास्तविक आत्मा, वह अन्तर में प्रकाशित होता है। **और इसमें आश्चर्य क्या है!** उसमें आश्चर्य क्या? आत्मा ऐसा ज्ञात हो और अनुभव में आवे, वह तो उसका स्वरूप है, उसमें आश्चर्य क्या करना? यह अजीव का अधिकार पूरा हुआ।

इस प्रकार, सुकविजनरूपी कमलों के लिये जो सूर्य समान हैं और पाँच इन्द्रियों के फैलाव रहित देहमात्र जिन्हें परिग्रह था... नग्न दिगम्बर मुनि थे न। **ऐसे पद्मप्रभमलधारिदेव द्वारा रचित नियमसार की तात्पर्यवृत्ति नामक टीका में (अर्थात् श्रीमद्भगवत्कुन्दकुन्दाचार्यदेव प्रणीत श्री नियमसार परमागम की निर्ग्रन्थ मुनिराज श्री पद्मप्रभमलधारिदेवविरचित तात्पर्यवृत्ति नामक टीका में) अजीव अधिकार नाम का दूसरा श्रुतस्कन्ध समाप्त हुआ।**

शुद्धभाव अधिकार पर पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचन
१९८० के दूसरे भाग में प्रकाशित
किये गये हैं।